International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 25-08-2025, Accepted: 25-09-2025, Published: 11-10-2025
Volume 11, Issue 4, 2025, Page No. 12-14

हिंदी के विकास में अवधी का महत्त्व

पंकज यादव
शोध छात्र, हिंदी विभाग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
हिंदी के विकास में अवधी का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। हम जानते हैं कि अवधी हिंदी की प्रमुख बोलियों में से एक है, जिसका साहित्यिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक प्रभाव हिंदी भाषा की समृद्धि में गहरा है। अवधी अपभ्रंश से विकसित होकर प्राचीनकाल से ही बोलचाल और साहित्य की भाषा रही। इसने हिंदी के प्रारंभिक स्वरूप को संरचना और रूप–रंग देने में योगदान दिया। अवधी ने हिंदी को अपनी ध्वन्यात्मक मिठास, शब्द–भंडार और सरल व्याकरण प्रदान किया। इसके कारण हिंदी जनभाषा के रूप में और अधिक व्यापक हो सकी। अवधी ने हिंदी के विकास में भक्ति, लोकजीवन, सरलता और साहित्यिक समृद्धि का अद्भुत योगदान दिया है। तुलसीदास और जायसी जैसे महाकवियों की रचनाएँ न केवल हिंदी की धरोहर हैं बल्कि विश्व साहित्य की अमूल्य निधि हैं। अवधी ने हिंदी को जनभाषा और लोकमानस से जोड़ा, जिससे हिंदी आज की व्यापक और सशक्त भाषा बनी, साथ ही अवधी भाषा ने हिंदी को भक्ति, लोकजीवन, सरलता और साहित्यिक वैभव दिया। यह न केवल हिंदी साहित्य के विकास में बल्कि भारतीय समाज और संस्कृति को समृद्ध बनाने में भी अहम रही है। अवधी भाषा न केवल साहित्य की आधारशिला है, बल्कि उत्तर भारत की सांस्कृतिक आत्मा भी है। इस लेख में हिंदी के विकास में अवधी के योगदान को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्दः संस्कृति, विकास, हिंदी, भाषा, भक्ति, लोकजीवन, साहित्यिक वैभव, परंपरा, अवधी, रामकाव्य, अवध समाज।

जब भी किसी संस्कृति का विकास होता है तो उसका विकास, निर्माण केवल एक दिन में नहीं होता है, बल्कि उस संस्कृति के विकास, निर्माण के पीछे एक लंबी निरंतर चलने वाली प्रक्रिया, और परंपरा होती है तभी जाकर किसी संस्कृति का निर्माण एवं विकास होता है। इसलिए अवध क्षेत्र, समाज एवं उसकी संस्कृति का विकास एवं निर्माण इसी परंपरा, प्रक्रिया का परिणाम है। इसी कड़ी में जो अवधी भाषा साहित्य का विकास है वह तत्कालीन अवध क्षेत्र, समाज एवं अवध संस्कृति से जुड़ा हुआ है। अवधी साहित्य के अनुसार साहित्य और संस्कृति ने मध्यकाल में खास करके 16वीं 17वीं शताब्दी में अवध क्षेत्र को प्रभावित किया और अवध क्षेत्र में रहने वाले लोगों को एक अवध समाज बनाने के लिए अवधी साहित्य ने प्रमुख रूप से मदद किया और एक तरह से यह विश्वास करते हैं कि साहित्य एक पद्वति में समाज को प्रतिबिंबित करने वाला एक विशेष साधन है। इसीलिए मध्यकालीन उत्तर भारत के विषय पर जो अधिकांश अध्ययन है वह फारसी भाषा के स्रोतों के आधार पर हुआ। ज्यादा स्थानीय स्रोतों के अनुसार समाज के विकास पर संस्कृति के क्षेत्र में अध्ययन नहीं होने के कारण से हम विशेष रूप से तत्कालीन अवध क्षेत्र, समाज के विषय में अध्ययन करते समय इस क्षेत्र, इस काल में जो अवधी साहित्य लिखा गया। उसके अनुसार ही 16वीं 17वीं शताब्दी में अवध क्षेत्र, समाज के चिंतन को, सामाजिक, सांस्कृतिक विकास को खास करके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में वर्णन करने का पहमने एक विशेष प्रयास किया है। मध्यकालीन अवधी का विकास नामक पुस्तक में कन्हैया सिंह लिखते हैं कि "किसी भी भाषा की गत्यात्मकता (गतिशीलता) और परिवर्तनशीलता उसकी सबसे बड़ी विशेषता होती है। अपनी इन्ही विशेषताओं के कारण भाषा कई चरणों से होकर गुजरती है। जैसे – बोली, विभाषा और भाषा, लोकभाषा, काव्य भाषा, गद्य भाषा आदि ऐसे ही भाषा के चरण हैं। अवधी, पूर्वी हिंदी और हिंदी ऐसे ही भाषिक विकास के क्रम की स्वाभाविक परिणति है।"[1]

अवधी भाषा का एक बोली भाषा के रूप में प्रथम उल्लेख अमीर खुसरो के ग्रंथ नूह सिपेहर (1318 ई०) में हुआ है। उसके बाद ही मूल रूप से अवधी भाषा में साहित्य लिखे जाने की शुरुवात हुई। इसी कड़ी में सर्वप्रथम मुल्ला दाउद ने अवधी भाषा में चंदायन (1379 ई०) के नाम से प्रथम अवधी काव्य की रचना की। इसके बाद अवधी भाषा– साहित्य ने जो रफ्तार पकड़ी वह सत्रहवीं सदी तक निरंतर जारी रही। इसी काल में अवधी बोली भाषा ने अपना एक नया स्वरूप विकसित कर अनेक अवधी साहित्यिक कृतियों को जन्म दिया जिनमें सत्यवती कथा, मृगावती, पद्मावत, मधुमालती, रामचरितमानस, रसरतन, अवध विलास, प्रेम प्रगास आदि प्रमुख है। फिर यह रफ्तार अठारहवीं सदी में ही जाकर उर्दू, खड़ी बोली आदि के प्रभाव के चलते कुछ समय के लिए अवरुद्ध हुई। 16वीं 17वीं शताब्दी में अवधी भाषा में जो साहित्य विकसित हुआ। उससे न केवल अवधी भाषा साहित्य का विकास हुआ बल्कि उसके साथ– साथ अवध समाज एवं संस्कृति का भी विकास हुआ। क्योंकि भाषा, साहित्य एवं संस्कृति इन तीनों का विकास आपस में जुड़ा हुआ है।अवधी का प्राचीन काल अत्यन्त कवित्वपूर्ण है। इस काल में अवधी के कवित्वपूर्ण मानक ग्रन्थों की रचना हुई है। इनमें सर्वाधिक अग्रणी सूफी कवियों को माना जा सकता है। इसमें प्रथमतः जायसी का पद्मावत, मंझन की मधुमालती, कुतुबन की मृगावती, शेखनबी का ज्ञानदीप, उसमान की चित्रावली, जानकी कमलावती, नूर मुहम्मद की इन्द्रावती, तथा अनुराग बाँसुरी, शेख रहीम का भाषा–प्रेमतत्व, सूरदास लखनवी का नलदमन, कासिम शाह का हंस जवाहर, तथा शेख निसार का युसुफ–जुलेखा आदि काव्य कृतियाँ रची गईं।

मध्यकालीन अवधी साहित्य का सम्यक अध्ययन करें तो उसमें अवधी का सन्त काव्य,अवधी का प्रेमकाव्य,अवधी का रामकाव्य, अवधी का कृष्णकाव्य, अवधी के चरितात्मक तथा नीतिकाव्य को ध्यान में रखना जरूरी है। जिस प्रकार भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग है, उसी प्रकार मध्यकाल अवधी साहित्य का स्वर्णयुग है। अवधी का सन्तकाव्य अत्यन्त समृद्ध है। सन्तकवि प्रायः पर्यटन पर रहते थे, जहाँ टिक जाते थे वहाँ कुछ दिन रहकर पुनः अन्यत्र चले जाते थे। परिणामतः उनकी काव्यभाषा में अनेक प्रदेशों के शब्दों की भरमार हो जाना स्वाभाविक ही है। अधिकतर संतकवि हिन्दी के पूर्वी प्रदेश के निवासी थे, इसलिए

उनकी भाषा भी पूर्वी हिन्दी (अवधी) की नींव पर ही आधारित है। सूफ़ी काव्य की बात करें तो परिणाम और प्राचीनता दोनों दृष्टियों से अवधी साहित्य में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

अवधी में रामकव्य को देखें तो रामकाव्य अवधी की एक अति विशिष्ट धरोहर है। राम के बिना अवधी और अवधी के बिना राम सम्भवतः अधूरे ही रहते। इस कविता–धारा के कवियों में अधिकांश ने अपने भावों की अभिव्यक्ति अथवा कविता का माध्यम अवधी को ही बनाया है। इसके कई कारण हो सकते हैं। एक तो अवधी भगवान राम के जन्मस्थान अयोध्या की भाषा होने के कारण राम–भक्तों को विशेष सुखद लगती है। दूसरे मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन का आविर्भाव होने तक अवधी ने साहित्यिक भाषा का रूप धारण कर लिया था। तीसरे अवधी में चरितकाव्य प्रणयन की अद्भुत क्षमता विद्यमान है। चौथे, यह जनभाषा जनचेतना की वाहक बनी हुई थी। एतदर्थ रामचरित उद्घाटन हेतु रामभक्त कवियों ने अवधी को ही अपने काव्य प्रणयन के हेतु उपयुक्त समझा। अवध प्रदेश के अतिरिक्त सुदूर प्रदेशों के कवियों ने भी प्रायः अवधी में ही रामकाव्यों की रचना की है। अवधी ग्रंथावली में जगदीश पीयूष लिखते है कि "प्रेमाख्यानक परम्परा में जिस तरह मलिक मुहम्मद जायसी अग्रगण्य हैं, उसी प्रकार गोस्वामी तुलसीदास भी रामकाव्य परम्परा तथा अवधी के सिरमौर हैं। यद्यपि महात्मा तुलसी से पहले रामानन्द अवधी काव्य सृजन का श्रीगणेश कर चुके थे तथापि अवधी को शीर्षस्थ स्थान की अधिकारिणी तथा रामकव्य धारा को उन्नत शिखर पर पहुँचाने वाले गोस्वामी तुलसीदास जी ही हैं। तुलसी की प्रसिद्धि और प्रभाव के कारण ही अनेकशः कवियों ने रामकाव्य और अवधी को ही अपनी रचना का हेतु बनाया।"[2]

"अवधी का रामकाव्य हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। महात्मा तुलसी अवधी रामकाव्य के सबसे महान कवि हैं। रामचरितमानस के माध्यम से उन्होंने रामभक्ति अजस्र धारा प्रवाहित की है। जिस प्रकार सूरदास ने ब्रज भाषा में रचना करके उसे विशिष्ट स्थान पर आसीन कर दिया, उसी प्रकार तुलसी ने अवधी में मानस की रचना करके अवधी को अन्य बोलियों तथा भाषाओं में सिरमौर बना दिया है।"[3] रामकाव्य की ही तरह अवधी में कृष्णकाव्य की भी एक सशक्त परामपरा विद्यमान है। तुलसीदास के समकालीन कृष्णभक्त कवि लक्षदास ने अवधी में दोहा–चौपाई छन्द में 'कृष्णरस सागर' महाकाव्य की रचना की है। अवध का सांस्कृतिक इतिहास सही अर्थो में आयों के आगमन के साथ प्रारम्भ होता है। सामान्यतः यह बात सर्वमान्य है कि आयों का प्रथम अधिवास सप्तसिन्धु प्रदेश में हुआ, किन्तु आर्य–संस्कृति का पूर्ण विकास मध्यदेश के नाम से अभिहित की जाने वाली गंगा–यमुना और सरयू की घाटी में तथा विशेष रूप से अवध क्षेत्र में हुआ, जिसे प्रारम्भ में कोसल नाम से जाना जाता था। स्मरणीय है कि ईसापूर्व तीन हजार वर्ष से दो हजार वर्ष ईसापूर्व के बीच आयों की जो दो शाखाएँ गंगा–यमुना के मैदान में आकर बसीं, उनमें से पहली शाखा गंगा को पार कर सरयू की घाटी में आयी और उसने अयोध्या को अपना केन्द्र बनाया। दूसरी शाखा का मुख्य केन्द्र वाराणसी में स्थापित हुआ। इस प्रकार अवध का यह क्षेत्र आर्य–संस्कृति का सर्वमुख केन्द्र बना। जगदीश पीयूष ने लिखा है कि "अवधी भाषा अपनी साहित्यिक संपदा एवं अवध–क्षेत्र अपनी सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रख्यात है। यह साहित्य अपने उत्कृष्ट लोकचिन्तन, सांस्कृतिक निरूपण, सामाजिक विशिटता एवं साहित्यिक गरिमा में अद्वितीय है।"[4] डॉ. ग्रियर्सन, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, डॉ. बाबूराम सक्सेना, राहुल सांकृत्यायन, डा. रामविलास शर्मा, हरदेव बाहरी, डॉ. भोलानाथ तिवारी प्रभृत विद्वानों ने प्रकृष्ट एवं विद्वत्तापूर्ण गवेषणाओं में यह सुनिश्चित–सुस्थिर किया है कि यह भाषा या तो कोसल महाजनपद की गणभाषाओं से निकली है या अर्धमागगधी अपभ्रंश से। "अवधी भाषा का इतिहास प्रायः एक सहस्र वर्षों का है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में इस भाषा के प्रयोक्ताओं में विद्यापति, रोडा, ज्योतिरीश्वर ठाकुर, दामोदर पंडित आदि परिगणित किये जाते हैं।"[5]

अवधी भाषा के आरम्भिक काल का काव्य अनेक तथ्यों के कारण विपुल परिमाण में प्राप्त नहीं है। मध्य युग में पदार्पण के साथ ही अवधी भाषा और साहित्य दोनों अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुए। रामकाव्य, संतकाव्य, प्रेमकाव्य, कृष्णकाव्य आदि धाराओं के अन्तर्गत सृजित साहित्य अद्यतन भी अपना समकक्षी नहीं रखता। हिन्दी साहित्य के सम्पूर्ण परिदृश्य पर अवधी की उपर्युक्त काव्य सम्पदा अपना स्वर्णिम स्थान रखती है। अद्यावधि उसका केन्द्रीय आकर्षण और महिमा अक्षुण्ण बनी हुई है। गोस्वामी तुलसीदास (16वीं शताब्दी) ने अवधी भाषा को शिखर पर पहुँचाया। उनका रामचरितमानस अवधी में रचित विश्व की अद्वितीय महाकाव्यात्मक रचना है।

कवितावली, गीतावली और विनयपत्रिका जैसी अन्य कृतियों ने अवधी को हिंदी साहित्य की मुख्यधारा में प्रतिष्ठित किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने हिंदी साहित्य के इतिहास में लिखते हैं कि "तुलसीदासजी के रचनाविधान की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा के बल से सबके सौंदर्य की पराकाष्ठा अपनी दिव्य वाणी में दिखाकर साहित्यक्षेत्र में प्रथम पद के अधिकारी हुए। हिंदी कविता के प्रेमी मात्र जानते हैं कि उनका ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था। ब्रज भाषा का जो माधुर्य हम सूरसागर में पाते हैं वही माधुर्य और भी संस्कृत रूप में हम गीतावली और कृष्णगीतावली में पाते हैं। ठेठ अवधी की जो मिठास हमें जायसी की पद्मावत में मिलती है वही जानकीमंगल, पार्वतीमंगल, बरवैरामायण और रामललानहछू में हम पाते हैं। यह सूचित करने की आवश्यकता नहीं कि न तो सूर का अवधी पर अधिकार था और न जायसी का ब्रजभाषा पर!"[6]

रीतिकाल में रीतिकालीन साहित्यिक मानसिकता के साथ अनेक स्तरों पर अनुकूलन स्थापित न हो पाने के कारण तथा भक्त कवियों के द्वारा रचनाधर्मिता की सभी सम्भावनाओं को निःशेष कर दिये जाने के कारण काव्य–सृजन की धारा अपेक्षया मंद गति से प्रवाहित होती परिलक्षित की जा सकती है, किन्तु स्वातन्त्र्य काल में यह मन्द प्रवाह अपनी गतिशीलता में अमन्द हो उठता है। यहाँ पहुँच कर अवधी–काव्य राष्ट्रीयता, सामाजिकता, सांस्कृतिक एकता आदि अनेक महत्वपूर्ण मूल्यों को समेट कर अग्रसर होता है। इसी बिन्दु से अवधी का आधुनिक युग भी प्रारम्भ होता है। इस युग की अवधी वृहत् चतुष्टयी ने (पढ़ीस, बंशीधर शुक्ल, मृगेश, रमई काका) अपने काव्य वैभव और प्रतिभा का जो उत्कृष्ट प्रदर्शन किया वह आधुनिक अवधी के परिदृश्य पर सर्वश्रेष्ठ स्थान का अधिकारी है। इस युग की रचना प्रवृत्तियाँ व्यापक परिवेश में राष्ट्र, समाज, संस्कृति, राजनीति, धर्म आदि से जुड़ी हुई हैं। अवधी कविता का अद्यतन साहित्य परम्परा से प्राप्त प्रवृत्तियों के प्रति सचेष्ट होने के साथ–साथ समसामयिक सन्दर्भों को ग्रहीत रकता हुआ अपनी रचना भूमि विनिर्मित करता है। तब यह सुनिश्चित हो जाता है कि अब रचनाकार का दायित्व और बढ़ गया है, गुरुतर हो गया है। "ग्राम्य परिवेश, प्रकृति और संस्कृति को केन्द्रीय रचना–भूमि के रूप में प्रयुक्त करने वाली अवधी भाषा अब अपने युगबोध से सीधे टकराती है और अपनी पूर्व प्रकृति एवं प्रवृत्ति को अक्षत रखते हुए नये आयामों को विकसित करती है। सम्प्रति अवधी–काव्य अपने युगबोध के विविध स्तरों तथा प्रकारों के माध्यम से विकसित करती है।"[7]

यदि हम अवधी भाषा के बहुआयामी महत्व के बारें में बात करें तो इस संदर्भ में जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन का व्यक्तिगत अनुभव यहां पर प्रस्तुत करना प्रासंगिक होगा। जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन मध्यकालीन अवधी साहित्य के श्रेष्ठ कवि तुलसीदास (मुगल शासक अकबर के समकालीन) के साहित्य के बारे में बात करते हुये कहते है कि "आज से आधी शाताब्दी पूर्व मुझसे एक वृद्ध

पादरी ने कहा था कि उत्तर भारत के लोगों (की संस्कृति) को तब तक भली भांति नहीं समझा जा सकता जब तक तुलसीदास ने जो कुछ लिखा है उसकी प्रत्येक पंक्ति को हृदयंगम न कर लिया जाय। अब मैं अनुभव कर रहा हूँ कि उस व्यक्ति का कथन कितना सत्य था।"[8] भाषा – साहित्य का अध्ययन केवल भाषा के विकास, भाषाविज्ञान के ही लिए नहीं होता है बल्कि जिस क्षेत्र में जो भाषा बोली जाती है, उपयोग में लायी जाती है उस भाषा–साहित्य के द्वारा उस क्षेत्र की संस्कृति एवं मानव समाज के विकास को भी देखा जा सकता है। कोई भी भाषा – साहित्य एक तरह से एक संस्कृति एवं समाज के विकास का एक केंद्र बिंदु होती है। इसी दिशा में किसी भी संस्कृति के विकसित होने में भाषा की अग्रणी भूमिका होती है। भाषा के विकास को हम सिर्फ भाषा से नहीं मानते है, बल्कि उसके विकास को हम उसी भाषा में विकसित साहित्य में देख सकते हैं। इसलिए इस संदर्भ में खास करके तत्कालीन अवध क्षेत्र के परिप्रेक्ष्य में अवधी भाषा – साहित्य के विकास का भी अध्ययन हम तत्कालीन समाज एवं संस्कृति से जोड़कर देखने का प्रयास करते हैं। अवधी साहित्य सत्यवती कथा, मृगावती, पद्मावत, मधुमालती, रामचरितमानस, चित्रावली, माधवानल कामकंदला, रसरतन, अवध विलास आदि से भरा पड़ा है, और तो और जायसी का पद्मावत, तुलसीदास का रामचरितमानस तो पूरी तरह से अवध क्षेत्र के सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास का निर्माण करने में सहायक है जिसे कोई भी नजरांदाज नहीं कर सकता है।

सांस्कृतिक दृष्टिकोण से काशी एवं कोशल तथा प्रयाग प्रमुख शिक्षा केन्द्र थे। सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बाँधने में ये तीनों ही स्थल महत्वपूर्ण है। काशी संस्कृत के प्रचार–प्रसार के लिये प्राचीन नगरी मानी जाती है। कालान्तर में इसी क्षेत्र में अवधी भाषा का विकास हुआ, अवधी भाषा ने अपने विकास काल से लेकर आज तक भारत में ही नहीं, उसके बाहर भी उसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ता है। ब्रिटिश उपनिवेशों में जहां–जहां भारतवंशी गये, वे अपने साथ अवधी भाषा भी ले गये। चौदहवीं शादी से लेकर बीसवीं शताब्दी तक अवधी भाषा का उत्कर्षकाल है। अवधी की कई विशेषताएँ हैं, प्रथमतया यह दरवारी भाषा के रूप में नहीं विकसित हुई, यह स्वतंत्र रूप से फली–फूली और आगे बढ़ी। अवधी के दो प्रबन्ध रामचरितमानस एवं पद्मावत ऐसे महाकाव्य है जो विश्व बाड्मय में किसी भी चुनौती को स्वीकार करते हैं। इन प्रबन्धों को अपनी मौलिक विशेषता है। इनके पूर्व का साहित्य राज्याश्रय में पलकर अपने पालक का यशोगान करता है अथवा उनके विनोद के लिये काव्यरचना करता है। परन्तु अवधी के दोनों महाकाव्य उस जन के निकट हैं जो शोषित एवं पीड़ित हैं। "भाषा भी जनभाषा है जो आम आदमियों में बोली जाती है। संस्कृत का विद्वत् समाज तुलसी तथा उनके काव्य को मान्यता देने के लिये तैयार नहीं था, वो इसे गंवारू भाषा समझते थे परन्तु इस जनभाषा में लिखे गये प्रबन्ध को जन ने इस प्रकार स्वीकार किया कि वह पथ–प्रदर्शक के रूप में उसके जीवन में सम्मिलित हो गया। तुलसी किसी विनोद के लिये अथवा उत्सवधर्मिता के लिये काव्यरचना नहीं करते हैं, उनका मूल उद्देश्य समाज की विकृतियों को दूर करके स्वस्व समाज को स्थापित करना है। उनके काव्य में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है कि उनका विश्वास किसी निरंकुश राज्यतंत्र में नहीं था।"[9]

इस तरह हदेखें तो हिंदी साहित्य के इतिहास में अवधी का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण और अविस्मरणीय है। अवधी केवल एक क्षेत्रीय बोली नहीं रही, बल्कि इसने हिंदी साहित्य की नींव को मजबूत करने में अहम भूमिका निभाई। अवधी भाषा सरल, सरस और मधुर होने के कारण जनसाधारण तक धार्मिक और दार्शनिक विचारों को पहुँचाने का प्रभावी माध्यम बनी। अवधी भाषा का संबंध सीधे लोकजीवन और लोकगीतों से रहा। जैसे– लोकगीत, कजरी, बिरहा, आल्हा, कहरवा आदि में अवधी का अद्भुत सौंदर्य देखने को मिलता है। किसानों, स्त्रियों और ग्रामीण समाज के जीवन का चित्रण अवधी साहित्य में स्वाभाविक रूप से हुआ। कबीर, सूरदास, जायसी, रहीम आदि कवियों की रचनाओं में कहीं–न–कहीं अवधी शब्दावली और भाव–संप्रेषण की छाप मिलती है। इस प्रकार अवधी भाषा के साहित्य ने हिंदी गद्य और काव्य दोनों के लिए प्रेरणा और आधार तैयार किया। हिंदी साहित्य के इतिहास में अवधी का योगदान इस दृष्टि से अमूल्य है कि इसने हिंदी को भक्ति आंदोलन की ऊँचाई, महाकाव्यात्मक परंपरा और लोकधर्मी स्वरूप प्रदान किया। तुलसीदास की रचनाओं ने इसे अमरता दी और जन–जन के हृदय में बसा दिया। इसलिए कहा जा सकता है कि अवधी हिंदी साहित्य की आत्मा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कन्हैया सिंह, अनिल कुमार तिवारी, मध्यकालीन अवधी का विकास, वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन, प्रथम सं० 2000, पृष्ठ 01.
2. जगदीश पीयूष, अवधी ग्रंथावली खण्ड 3, वाणी प्रकाशन, प्रथम संकरण 2008,पृष्ठ 23
3. वही पृष्ठ 23
4. जगदीश पीयूष, अवधी ग्रंथावली खण्ड 3, वाणी प्रकाशन, प्रथम संकरण 2008,पृष्ठ 136
5. वही पृष्ठ 136
6. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, साहित्य सेवा प्रकाशन, पृष्ठ 88
7. जगदीश पीयूष, अवधी ग्रंथावली खण्ड 3, वाणी प्रकाशन, प्रथम संकरण 2008,पृष्ठ 136
8. जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, सं० भारत का भाषा सर्वेक्षण भाग 1, पूर्वोक्त, पृष्ठ 314.
9. जगदीश पीयूष, अवधी ग्रंथावली खण्ड 1, वाणी प्रकाशन, प्रथम संकरण 2008,पृष्ठ 96)